51

यरूशलेम में

(21:12-27)

यीशु जानता था कि वह एक विरोधी नगर में जा रहा है, क्योंकि अधिकारी उससे घृणा करते थे। मत्ती 21:8-11 फसह के समय जोश से भरी भीड़ द्वारा उसके स्वागत से उसके नगर में जाने की बात बताता है। यीशु पहले क्या करता है?

मन्दिर को शुद्ध करना (21:12, 13)

[12]यीशु ने परमेश्वर के मन्दिर में जाकर, उन सबको, जो मन्दिर में लेन-देन कर रहे थे,
निकाल दिया; और सर्राफों के पीढ़े और कबूतरों के बेचने वालों की चौकियां उलट दीं।
[13]और उन से कहा, "लिखा है, कि मेरा घर प्रार्थना का घर कहलाएगा; परन्तु तुम उसे
डाकुओं की खोह बनाते हो।"

मत्ती विजयी प्रवेश से सीधा मन्दिर को शुद्ध करने चला गया, जबकि मरकुस ने संकेत दिया कि मन्दिर का शुद्ध किया जाना विजयी प्रवेश के अगले दिन हुआ जब यीशु फिर से यरूशलेम में गया (मरकुस 11:11-19)। अन्य शब्दों में मन्दिर का शुद्ध किया जाना वास्तव में दुख भोगने के सोमवार वाले दिन हुआ।

एक परेशान करने वाला प्रश्न सुसमाचार के सहदर्शी विवरणों में मन्दिर के शुद्ध किए जाने (21:12, 13; मरकुस 11:15-18; लूका 19:45, 46) और यूहन्ना रचित सुसमाचार के आरम्भ के निकट दिए गए (यूहन्ना 2:13-17) में क्या सम्बन्ध है। क्या यह दोनों एक ही घटना हैं यानी दुख भोगने के सप्ताह के दौरान वास्तव में होने वाली घटना? क्या यूहन्ना ने धर्मशास्त्रीय (कालक्रमिक को छोड़) कारणों के लिए सुसमाचार के अपने विवरण के आरम्भ में इस शुद्ध किए जाने को रखा होगा? क्या हम यह मान लें कि यह दो अलग-अलग घटनाएं हैं जिनमें से एक तो यीशु की सेवकाई के आरम्भ में घटी और दूसरी अन्त में? क्या उनमें अलग-अलग कालक्रमिक स्थानों के साथ-साथ अलग-अलग विवरण भी हैं? यूहन्ना में यीशु के मन्दिर को शुद्ध करने के बाद की बात इस बाद वाले विचार का समर्थन करती है। यहूदियों ने कहा कि वे मन्दिर पर छयालीस साल तक काम करते रहे थे (यूहन्ना 2:20)। हेरोदेस महान द्वारा पुनर्निर्माण का कार्य लगभग 19 ई.पू. में आरम्भ हुआ,[1] जिसका अर्थ है कि यूहन्ना में मन्दिर का शुद्ध किया जाना यीशु की सेवकाई के आरम्भ में 27 ई. में हुआ।

आयत 12. यीशु ने परमेश्वर के मन्दिर में जाकर। मलाकी नबी ने एक समय की भविष्यवाणी की थी, जब मसीहा ने मन्दिर में आना था। "सुनार की आग और धोबी के साबुन के समान" उसने "लेवियों को शुद्ध" करना था ताकि वह लोगों की ओर से परमेश्वर को ग्रहण

योग्य बलिदान चढ़ा सके (मलाकी 3:1-4)। यह मसीहा से जुड़ी यहूदियों की उम्मीद से मेल खाता था जो यहेजकेल 40-48 और जकर्याह 6:12, 13 के दर्शनों पर आधारित थी। यहूदियों का मानना था कि मसीहा मन्दिर को शुद्ध करके फिर से बनाएगा। उसके इसे 167 ई.पू. में ऐपिफेनुस और 63 ई. पू. में पौम्पे नामक मूर्तिपूजक हमलावरों के अपवित्र करने से उठने और परमेश्वर के अपने लोगों द्वारा झूठी आराधना से शुद्ध करने की उम्मीद थी।[2]

पवित्र किए जाने के विचार पुराने नियम की छद्म की पुस्तकों के लेखों में भी मिलते हैं: ''देश, हे प्रभु और उनके लिए उनका राजा दाऊद का पुत्र उस समय में जिसका तुझे पता है अपने सेवक इस्राएल पर राज करने के लिए खड़ा कर, हे परमेश्वर। ... वह यरूशलेम को साफ़ करेगा (और इसे) वैसा ही पवित्र बनाएगा जैसा यह आरम्भ में था।''[3] मत्ती में पहले यीशु ने मन्दिर पर अपने अधिकार की घोषणा की थी (12:6 पर टिप्पणियां देखें)। मन्दिर को उसका शुद्ध करना इसके भावी के विनाश की ओर संकेत करते हुए न्याय करने का सांकेतिक कार्य है (24:1, 2)। शीघ्र ही यीशु ने एक नया ''मन्दिर'' अर्थात कलीसिया बनाना था, जिसमें शुद्ध बलिदान चढ़ाए जाने थे (रोमियों 12:1, 2; 1 कुरिन्थियों 3:16, 17; इब्रानियों 13:15)।

''मन्दिर'' के लिए *naos* के बजाय *hieron* का इस्तेमाल इस बात का संकेत है कि यह शुद्ध किया जाना बाहरी आंगन में हुआ। इस स्थान को ''अन्यजातियों का आंगन'' कहा जाता था क्योंकि इसमें यहूदियों के साथ-साथ अन्यजाति भी आ सकते थे। यह वही क्षेत्र था जहां कारोबारी लोग अपना कारोबार करते थे। *Naos* एक मूर्तिपूजकों का मन्दिर था, जहां मूर्ति रखी गई थी। यहूदियों में यह पवित्र स्थान था। जब यीशु अन्यजातियों के आंगन में गया तो उसने **उन सबको जो** मन्दिर में लेनदेन कर रहे थे, निकाल दिया।

यूहन्ना वाले मन्दिर के शुद्ध किए जाने में उसने स्पष्ट बताया कि बेची जाने वाली चीज़ें भेड़ें और बैल थे (यूहन्ना 2:15)। व्यवस्था किसी यहूदी को, जो मन्दिर से काफ़ी दूर रहता हो अपने-अपने झुण्ड में से लाने के बजाय बलिदान के लिए नगर में पशु खरीदने की अनुमति देती थी (व्यवस्थाविवरण 14:24-26)।

यीशु ने इस प्रथा पर आक्रमण नहीं किया बल्कि उसने इसके आस-पास के दुरुपयोगों का विरोध किया। एक मुद्दा तो स्थान का था; वह मन्दिर के पवित्र आंगन में दुकाने लगाने वाले व्यपारियों के विरुद्ध हो सकता है। एक और समस्या अन्याय की थी। प्रधान याजकों ने कारोबारियों को अपना करोबार बढ़ाने के लिए अन्यजातियों के आंगन में जगह बेचकर अपना धन बढ़ाने के लिए व्यवस्था का लाभ उठाया था। ये कारोबारी ग्राहकों से मन माना दाम वसूल करने के लिए जाने जाते थे। इसके अलावा याजक भी केवल उन्हीं लोगों से लाए जानवरों को स्वीकृत करके जिनसे उन्हें लाभ मिलता था अन्य स्थानों से लाए जानवरों को नकार देते होंगे।[4]

लेनदेन करने वालों को निकालने के अलावा यीशु ने **सर्राफों के पीढ़े** उलट दिए। मिशनाह के अनुसार ''सर्राफ'' निसान के महीने से पहले जब फसह होता था, अदार के पच्चीसवें दिन मन्दिर में अपने पीढ़े लगा लेते थे।[5] यह मुख्यतया मन्दिर का कर देने में सुविधा के लिए (17:24 पर टिप्पणियां देखें) और बलिदान के लिए जानवर और अन्य चीज़ें जैसे दाखरस, तेल और आटा खरीदने के लिए किया जाता था।[6] पैसे एक समान मानक में बदलना आवश्यक था क्योंकि यात्री पूरे रोमी साम्राज्य में से आते थे और अपने साथ अलग अलग देश के पैसे लाते थे।

कुछ लोगों का दावा है कि विदेशी धन को बदला जाना आवश्यक था, क्योंकि बहुत से सिक्कों पर मूर्ति की आकृति या राजा की मूर्ति उकेरी होती थी, जो यहूदियों के लिए ठोकर का का कारण थी (निर्गमन 20:4; व्यवस्थाविवरण 4:16-18; 5:8)। तौभी प्राचीन स्रोतों से यह संकेत मिलता है कि धन वास्तव में सोर के सिक्कों में बदला जाता था।[7] स्पष्टतया सोर की मुद्रा पुरानी इब्रानी मुद्रा से बहुत मेल खाती थी। सोर के लोग व्यापारी होते थे और उनके सिक्कों को सही नाप वाले और सोने या चांदी की सही मात्रा वाले माना जाता था।[8] सोर का शेकेल (या चार द्राखमा) चित पर फिनीके के देवता मेलकार्ट और पट पर बाज की मूर्ति उकेरी होती थी। सोर में टकसाल को बंद करने के बाद रोमी सरकार ने ये सिक्के इस्राएल में बनने की अनुमति दे दी। परन्तु उन्हें इस झूठे प्रभाव से बचने के लिए कि यहूदियों को स्वायतता दे दी गई है पिछली मूर्तियों को रखना आवश्यक था। सोर के शेकेल 66 ई. में यहूदी विद्रोह तक इस्तेमाल होते रहे।

प्रभु ने पैसे का लेन-देन करने की आलोचना नहीं की। परन्तु वह इस बात से सहमत नहीं होगा कि यह काम मन्दिर के आंगन में किया जाए। बेशक उसने सेवा के अमर्यादित दर लेने की प्रथा का विरोध किया। जैसे बलिदान के लिए जानवर बेचने वालों के मामले में प्रधान याजकों को उन लोगों को भी स्वीकृति देनी होती थी जो मन्दिर में पैसे का कारोबार करते थे।

यीशु ने **कबूतर बेचने वालों की चौंकियां उलट दीं**। निर्धन लोग मेम्ने की जगह बलिदान के लिए कबूतर या पण्डुक खरीद सकते थे (लैव्यव्यवस्था 5:7; 12:6, 8; 15:14, 29)। यीशु की माता मरियम ने उसके जन्म के बाद अपने शुद्धिकरण के समय यही बलिदान किया था (लूका 2:24)। मत्ती संकेत देता है कि कबूतर बेचने वाले कई बार लोगों को चूना लगाते हुए अधिक दाम वसूल कर लेते थे।[9] कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि यीशु ने इन कारोबारियों को "डाकू" कहा (21:13)!

मरकुस 11:16 के अनुसार यीशु ने "मन्दिर में किसी को बर्तन लेकर आने जाने न दिया।" यह पाबंदी मिशनाह में लिखी गई बात से मेल खाती है: [मन्दिर के पहाड़] का इस्तेमाल शॉर्टकट के लिए न किया जाए।[10]

आयत 13. इन सर्राफों और लेनदेन करने वालों को निकालते हुए यीशु ने मन्दिर का सही उद्देश्य बताया: "**लिखा है, कि मेरा घर प्रार्थना का घर कहलाएगा**" (यशायाह 56:7)। डोलल्ड ए. हेग्नर के अवलोकन का इस्तेमाल करें तो यीशु की आलोचना पुराने नियम के नबियों द्वारा की गई आलोचना से मिलती थी कि मन्दिर के संस्कारों की गति से परमेश्वर के साथ वास्तविक सम्प्रेषण का लक्ष्य छिप गया था (यिर्मयाह 7:21-23; आमोस 5:21-24; मीका 6:6-8)।[11] मरकुस 11:17 अतिरिक्त वाक्यांश "सब जातियों के लिए" के साथ यशायाह 56:7 से उद्धरण को जारी रखता है। मत्ती में चाहे नहीं है पर यह वाक्यांश महत्वपूर्ण है क्योंकि अन्यजातियों का आंगन ही वह क्षेत्र था जो मण्डी में बदल चुका था। यहूदियों की व्यापारिक गतिविधियों से परमेश्वर की आराधना करने आए अन्यजातियों के गम्भीर प्रयासों में रुकावट आती थी। इन अन्यजातियों को मन्दिर के भीतरी क्षेत्र में जाने की मनाही थी।[12]

यीशु ने आगे कहा, "**परन्तु तुम उसे डाकुओं की खोह बनाते हो**।" यह भाषा यिर्मयाह 7:11 से ली गई है: "क्या यह भवन जो मेरा कहलाता है, तुम्हारी दृष्टि में डाकुओं की गुफा हो गया है? मैंने स्वयं यह देखा है, यहोवा की यह वाणी है।" उस संदर्भ में यहूदा के लोग परमेश्वर

के सामने विश्वास का पवित्र जीवन जीने के बजाय परमेश्वर के मन्दिर में जो उनके बीच में था भरोसा रख रहे थे। वे उन डाकुओं की तरह थे जो यह सोचकर कि गुफ़ा में छिप जाते हैं, वे अपने पापों के दण्ड से बच जाएंगे। यीशु ने इस भाषा को अपने समय के मन्दिर पर लागू किया। माइकल जे. विलकिंस ने लिखा है:

> धार्मिक अगुवे मन्दिर के साथ ऐसा व्यवहार कर रहे थे जैसे डाकू अपनी खोह से करते हैं–अनुचित ढंग से कमाए धन को जमा करने और भविष्य में गैर कानूनी गतिविधियों की योजना बनाने के लिए। फलस्तीन में गुफाओं का इस्तेमाल डाकुओं की खोहों के रूप में होता था, सो यह रूपक यीशु के सुनने वालों के लिए स्पष्ट समझ में आने वाला था।[13]

यीशु के कामों यानी मन्दिर से लेनदेन करने वालों और सर्राफों के पीढ़े और कुर्सियां निकाल देने का यहूदी मन्दिर की पुलिस या रोमी सैनिकों ने तुरन्त कार्रवाई नहीं की (देखें प्रेरितों 21:27–36)। लोगों के बीच उसकी प्रसिद्धि ने उस समय यहूदी अधिकारियों को उसके विरुद्ध किसी भी कार्यवाही करने को रोक दिया। परन्तु वे उसके नाश करने का बहाना ढूंढ़ने लगे (मरकुस 11:18)। सर्राफ और पैसे का लेनदेन करने वाले मन्दिर के पहाड़ के दक्षिण में शाही ओसारे में बैठे होते थे इसलिए उत्तर पश्चिमी कोने पर अंटोनिया के किले में बैठे रोमी सैनिकों के लिए भीड़ में से जो कुछ हो रहा था उसे देखने में अधिक कठिनाई आई होगी।

यरूशलेम में चंगाई के अन्तिम आश्चयकर्म (21:14-17)

[14]और अन्धे और लंगड़े, मन्दिर में उसके पास आए, और उस ने उन्हें चंगा किया। [15]परन्तु जब प्रधान याजकों और शास्त्रियों ने इन अद्‌भुत कामों को, जो उस ने किए, और लड़कों को मन्दिर में ''दाऊद के सन्तान को होशाना'' पुकारते हुए देखा, तो वे क्रोधित हुए [16]और उससे कहने लगे, ''क्या तू सुनता है कि ये क्या कहते हैं?'' यीशु ने उनसे कहा, ''हां; क्या तुम ने यह कभी नहीं पढ़ा: ''बालकों और दूध पीते बच्चों के मुंह से तूने अपार स्तुति कराई?'' [17]तब वह उन्हें छोड़कर नगर के बाहर बैतनिय्याह को गया, और वहां रात बिताई।

आयत 14. यीशु ने चाहे कुछ लोगों को **मन्दिर** में से निकाल दिया था पर उनको जो **उसके पास आए चंगा किया**। धर्मशास्त्र विशेष रूप से उन लोगों का उल्लेख करता है जो **अंधे** और **लंगड़े** थे (देखें 11:5; 15:30, 31)। लैव्यव्यवस्था 21:17, 18 के अनुसार हारून की संतान में से जो अंधे या लंगड़े हों वे वेदी पर सेवा नहीं कर सकते थे। इसके अलावा मिशनाह में कहा गया है कि पर्व के दौरान अंधों और लंगड़ों के लिए परमेश्वर के सामने भेंट लेकर जाना आवश्यक नहीं था।[14] हो सकता है कि उन्हें अन्यजातियों के आंगन तक जाने की छूट हो और उन्हें भीतरी मन्दिर में जाने की अनुमति न हो (2 शमूएल 5:8; LXX)।[15] यीशु का इन लोगों को शारीरिक चंगाई देना परमेश्वर के साथ उनके आत्मिक सम्बन्ध का संकेत था। पिछली आयतों की तरह यीशु मन्दिर में आने के लिए चाहता था कि वे आराधना में परमेश्वर के पास आ सकें। यीशु द्वारा अपने क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहले यरूशलेम में उसके द्वारा किए गए अन्तिम आश्चर्यकर्मों में

चंगाई के ये आश्चर्यकर्म थे।

आयत 15. इसके बाद से मत्ती में यहूदी अगुवों अर्थात **प्रधान याजकों और शास्त्रियों** को प्रमुखता से देखा जा सकता है (2:4 पर टिप्पणियां देखें)। वे यीशु के साथ पहले ही नाराज थे और अब उसके साथ **क्रोधित** होने के लिए बहाना ही चाहिए था। वे मन्दिर के शुद्ध किए जाने पर क्रोधित थे (मरकुस 11:18), परन्तु उन्होंने उन **अद्भुत कामों को** देखा था जो यीशु ने किए थे। उन चंगाइयों से रोमांचित होने के बजाय वे और भी चिड़ गए। अब तक कई **लड़कों ने जो मन्दिर में** थे, यीशु के साथ नगर में आई भीड़ की पुकार "दाऊद की संतान को होशाना" को और ऊंचा कर दिया (21:9)।

आयत 16. यहूदी अगुओं ने यीशु को डांटा और एक अर्थ में मांग की कि वह **लड़कों** को चुप कराए। यह विडम्बना ही है कि उन्होंने मन्दिर को मण्डी बना देने वालों की आलोचना नहीं की परन्तु उन्हें बच्चों के मुंह से निकली तारीफ रास नहीं आई।[16] बेशक वे इस बात से परेशान हुए होंगे कि एक रब्बी के रूप में यीशु "दाऊद का पुत्र" के पद को स्वीकार कर लेगा। क्रेग एस. कीनर ने कहा है कि इन अगुओं की नजर में यीशु "एक और करिशमाई नेता था, जिसकी प्रसिद्धि ने उसके अहंकार को काबू से बाहर कर दिया था।"[17] परन्तु इसमें इससे कहीं अधिक बात होगी। इन अगुओं ने यीशु की ईश्वरीयता का सामना किया था और अब वे उसका इनकार करने जा रहे थे।

उन्हें चुपचाप मान लेने के बजाय यीशु ने सप्तत्ति अनुवाद में से भजन संहिता 8:2 में से उद्धृत किया: **"क्या तुम ने यह कभी नहीं पढ़ा: "बालकों और दूध पीते बच्चों के मुंह से तूने अपार स्तुति कराई?"** "क्या तुम ने यह कभी नहीं पढ़ा ... ?" का प्रश्न यीशु की विशेष शैली थी (12:3 पर टिप्पणियां देखें)। "दूध पीते बालकों" (*nēpios* से) और "दूध पीते बच्चों" (*thēlazō*) तीन साल से कम उम्र के बच्चों के लिए कहे गए शब्द थे, यानी उस उम्र के लिए जिसमें यहूदी बच्चों से आम तौर पर दूध छुड़वाया जाता था।[18] यीशु की स्तुति कर रहे बच्चे स्पष्टतया भजन संहिता की पुस्तक में दिखाए गए बच्चों से बहुत बड़े थे। वह इस बात की ओर ध्यान दिला रहा था कि भविष्यवाणी के अनुसार यदि दूध पीते बच्चे स्तुति कर सकते हैं तो इन यहूदियों को यह उम्मीद क्यों नहीं करनी चाहिए कि बड़े बच्चे ऐसे कर सकते हैं? इससे पहले यीशु ने परमेश्वर में भरोसा रखने को समझाने के लिए बच्चों का इस्तेमाल किया था (18:1–4; 19:13–15)।

आयत 17. यीशु सहसा यहूदी अगुओं को मन्दिर में **छोड़कर नगर** से चला गया। वह **बैतनिय्याह को गया और वहां रात बिताई** (21:1 पर टिप्पणियां देखें)। पहले वह बैतनिय्याह में पहुंचा था (यूहन्ना 12:1), और दुख भोगने के पूरे सप्ताह में लौट आया था। वह मरियम, मारथा और लाज़र के घर में रुका होगा। यरूशलेम इस समय रोमी संसार के पूरे साम्राज्य में से आए यहूदी यात्रियों से खचा-खच भरा हुआ था। बैतनिय्याह यरूशलेम के बहुत निकट था जिस कारण यीशु और उसके चेले आसानी से दिन में नगर में जाकर शाम को वहां से लौट सकते थे। परन्तु उन्हें यहूदी अगुओं से सुरक्षा देने के लिए यह काफ़ी दूर था।

अंजीर के वृक्ष को श्राप देना[19] (21:18-22)

[18]भोर को जब वह नगर को लौट रहा था, तो उसे भूख लगी। [19]और अंजीर का एक पेड़ सड़क के किनारे देखकर वह उसके पास गया, और पत्तों को छोड़ उस में और कुछ न पाकर उस से कहा, ''अब से तुझ में फिर कभी फल न लगें।'' और अंजीर का पेड़ तुरन्त सूख गया।

[20]यह देखकर चेलों ने अचम्भा हुआ, और उन्होंने कहा, ''यह अंजीर का पेड़ क्योंकर तुरन्त सूख गया?'' [21]यीशु ने उन को उत्तर दिया कि ''मैं तुम से सच कहता हूं; यदि तम विश्वास रखो, और संदेह न करो; तो न केवल यह करोगे जो इस अंजीर के पेड़ से किया गया है, परन्तु यदि इस पहाड़ से भी कहोगे, कि 'उखड़ जा; और समुद्र में जा पड़,' तो यह हो जाएगा। [22]और जो कुछ तुम प्रार्थना में विश्वास से मांगोगे वह सब तुम को मिलेगा।''

आयत 18. पहले दुख भोग सप्ताह के दिनों के सम्बन्ध में मत्ती और मरकुस के विवरणों के बीच विरोधाभास लगता है; परन्तु ये समझ आने पर कि सुसमाचार के लेखकों ने इस विवरण को अलग-अलग दृष्टिकोण से लिया हमारी समस्या दूर हो जाती है। मरकुस ने अपने दृष्टिकोण में कालक्रम को ध्यान में रखा। उसने लिखा कि अंजीर के पेड़ को श्राप देने का पहला भाग सोमवार के दिन हुआ और दूसरा भाग इन दोनों भागों के बीच सोमवार को मन्दिर शुद्ध किए जाने के साथ मंगलवार को दूसरा भाग था। अर्थात (मरकुस 11:1, 12, 19, 20)। इसके विपरीत मत्ती ने एक ही बार में अंजीर के पेड़ की सारी कहानी बताते हुए विषय का ढंग अपनाया। मरकुस का विवरण यह स्पष्ट कर देता है कि जो कुछ मत्ती ने मत्ती 21:18, 19 में लिखा वह सोमवार के दिन हुआ और उसका कुछ भाग मंगलवार के दिन 21:20-22 में हुआ।[20]

बैतनिय्याह को छोड़कर जाने (21:17) और चेलों के साथ यरूशलेम में लौटने पर यीशु को **भूख लगी**। यह बात उन अन्य आयतों की तरह जो बताती हैं कि यीशु को थकावट होती या प्यास लगती थी, प्रभु के मनुष्य होने पर ज़ोर देती है (यूहन्ना 4:6, 7; 19:28)। यह **भोर को** हुआ। यह बैतफगे के निकट हुआ होगा (21:1)। वह यह नहीं बताता कि यीशु ने पहले ही नाशता कर लिया था या नहीं।

आयत 19. जब वे जा रहे थे तो यीशु ने **सड़क के किनारे अंजीर का एक पेड़** देखा। जब वे पेड़ के पास आए तो उसे **पत्तों को छोड़ उसमें और कुछ न** मिला। अंजीर के छोटे-छोटे पेड़ों के लिए जिन्हें अरबी लोग *तक्ष* कहते थे, मार्च के महीने में पत्तों के साथ दिखाई देना आम बात थी। इन्हें खाया जा सकता था, इकट्ठे करके बाजार में बेचा जा सकता था। परन्तु पके अंजीर का कटाई के मौसम के बाद गर्मी के मौसम में होता था। इसी लिए यीश ने उस पेड़ से कुछ फल की उम्मीद की हो सकती है चाहे तकनीकी रूप में वह ''फल का समय न था'' (मरकुस 11:13)। आर. के. हैरिसन ने कहा है, ''जब बसंत के मौसम में छोटे-छोटे पत्ते नज़र आएं तो हर फलदायक अंजीर से कुछ *तक्ष* मिल ही जाएंगी। ... परन्तु यदि पत्तों से भरे पेड़ पर कोई फल नहीं होता तो यह पूरे मौसम बिना फल के ही रहेगा।''[21]

पेड़ पर कोई फल न मिलने पर यीशु ने घोषणा की, ''**अब से तुझ में फिर कभी फल न**

लगें।'' मरकुस 11:14 में उसने कहा, ''अब से तेरा फल कोई न खाएगा!'' मत्ती ने यह दिखाते हुए कि **अंजीर का पेड़ तुरन्त सूख गया** यीशु के शब्दों की सामर्थ पर ज़ोर दिया। अंजीर का यह पेड़ जिसमें पत्ते तो थे, परन्तु जो अंजीर लगने चाहिए थे वे नहीं थे, बहुत से यहूदियों के लिए मेल खाता प्रतीक था जो परमेश्वर के लिए उपयुक्त फल नहीं लाते थे (मीका 7:1, 2; मत्ती 7:19)। उन्होंने यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले या यीशु का प्रचार सुनकर मन नहीं फिराया था (3:8, 10; 11:16-24)। मन्दिर में की जाने वाली उनकी आराधना भ्रष्ट हो चुकी थी। उन्होंने मसीहा को नकार दिया था और शीघ्र ही उसकी मृत्यु की मांग करनी थी। जिस कारण यरूशलेम और मन्दिर दोनों ने अन्तः नष्ट हो जाना था (24:1, 2)।

आयत 20. अगली सुबह (मरकुस 11:20) जब वे यरूशलेम को लौट रहे थे तो **चेलों** ने देखा कि **अंजीर का पेड़ सूख गया** था। उन्होंने उसे सूखते नहीं देखा था पर जब उन्होंने देखा तो यह पेड़ सूख चुका था। वे चकित थे, क्योंकि ये धीरे-धीरे नहीं सूखा था जैसे स्वाभाविक रूप में होता है। प्रभु के इसे श्राप देने के एक दिन बाद वह पेड़ पूरी तरह से सूख गया था। पतरस को एक दिन पहले किए प्रभु के काम याद आए और ''उस ने उस से कहा, हे रब्बी, देख! 'यह अंजीर का पेड़ जिसे तू ने स्राप दिया था सूख गया है' '' (मरकुस 11:21)। चेलों को लगा कि यह आश्चर्यकर्म चकित करने वाला है। हमें आश्चर्य होगा कि वह क्यों चकित थे, क्योंकि उन्होंने तो तीन से अधिक सालों से उसके कई आश्चर्यकर्म देखे थे। उस समय बेशक वे नहीं समझे थे कि यह यरूशलेम के गिरने का संकेत है।

आयत 21. यीशु ने बिना यह बताए कि ''क्यों'' आश्चर्यकर्म का ''कैसे'' समझाया।[22] उसने उन्हें बताया कि यदि उन्हें परमेश्वर में निष्कपट **विश्वास** है और वे **संदेह** नहीं करते (देखें 14:31) तो वे इससे भी बड़े अद्भुत काम कर सकेंगे। जो कुछ उसने यहां पर कहा वह सीधे-सीधे प्रेरितों से की गई प्रतिज्ञा थी यानी यीशु यह दावा नहीं कर रहा था कि उसके चेले आने वाले हर युग में आश्चर्यकर्म कर सकेंगे।

यीशु ने प्रेरितों को बताया कि वे **इस पहाड़** को उखाड़कर **समुद्र में** डाल सकते थे। यीशु की अपने चेलों के लिए पहाड़ को समुद्र में फैंकने की कोई इच्छा नहीं थी। इसके विपरीत वह अलंकार के रूप में रूपक का इस्तेमाल कर रहा था। पहाड़ को हिलाना किसी काम के यहूदी रूपक के लिए जिसे बहुत कठिन माना जाता हो, परन्तु असम्भव नहीं पाने के लिए एक यहूदी अभिव्यक्ति थी (17:20 पर टिप्पणियां देखें)।

आयत 22. तब यीशु ने कहा, **''और जो कुछ तुम प्रार्थना में विश्वास से मांगोगे वह सब तुम को मिलेगा।''** यह चाहे प्रेरितों को दिए उसके निर्देश का भाग है, परन्तु सामान्य नियम सब चेलों पर लागू होता है कि जब मसीही लोग प्रार्थना करें तो वे इस विश्वास के साथ प्रार्थना करें कि परमेश्वर उनकी सुनेगा और उनकी प्रार्थनाओं का उत्तर देगा (देखें 1 पतरस 3:12)। याकूब ने अपने पाठकों को समझाया कि ''विश्वास से मांगें और कुछ संदेह न करें'' (याकूब 1:6)। ऐसी प्रार्थनाएं आत्म केन्द्रित न हों। यूहन्ना ने मसीही लोगों से ''[परमेश्वर की] इच्छा के अनुसार'' विनतियां करते हुए प्रार्थना करने को कहा (1 यूहन्ना 5:14, 15)। परमेश्वर अपने बच्चों की प्रार्थनाएं हमेशा सुनता है परन्तु आवश्यक नहीं कि वह हर प्रार्थना के उत्तर में ''हां'' कह दे। उसका उत्तर ''नहीं'' भी होता है (देखें 2 कुरिन्थियों 12:7-9)।

यीशु के अधिकार को चुनौती
(21:23-27)

[23]वह मन्दिर में जाकर उपदेश कर रहा था, कि प्रधान याजकों और लोगों के पुरनियों ने उसके पास आकर पूछा, ''तू ये काम किस के अधिकार से करता है? और तुझे यह अधिकार किस ने दिया?'' [24]यीशु ने उनको उत्तर दिया ''मैं भी तुम से एक बात पूछता हूं; यदि वह मुझे बताओगे, तो मैं भी तुम्हें तुम्हें बताऊंगा; कि ये काम किस अधिकार से करता हूं। [25]यूहन्ना का बपतिस्मा कहां से था? स्वर्ग की ओर से या मनुष्यों की ओर से था?'' तब वे आपस में विवाद करने लगे, ''यदि हम कहें 'स्वर्ग की ओर से,' तो वह हम से कहेगा, 'फिर तुम ने उसकी प्रतीति क्यों न की?' [26]और यदि कहें 'मनुष्यों की ओर से,' तो हमें भीड़ का डर है, क्योंकि वे सब यूहन्ना को भविष्यवक्ता जानते हैं।'' [27]अत: उन्होंने यीशु को उत्तर दिया, ''हम नहीं जानते।'' उसने भी उन से कहा, तो मैं भी तुम्हें नहीं बताता, कि ये काम किस अधिकार से करता हूं।

आयत 23. यरूशलेम में पहुंचने पर यीशु **मन्दिर में** लौट गया। दुख भोगने के सप्ताह के दौरान उसने फसह के लिए इकट्ठा हुए लोगों को सिखाने के कई अवसर लिए। उसने अन्यजातियों के आंगन की बाहरी किनारे पर ओसारों में शिक्षा दी होगी। इनमें से एक पूर्व में सुलैमान के ओसारे का इस्तेमाल आरम्भिक कलीसिया के इकट्ठा होने के रूप में किया जाता थी (प्रेरितों 3:11; 5:12; देखें यूहन्ना 10:23)।

यहूदी अगुओं ने जिस प्रकार से यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले से सवाल किए थे (यूहन्ना 1:19–28) वैसे ही उन्होंने यीशु से भी सवाल किए।[23] एक समय **उसके** उपदेश करने के समय उन्होंने पूछा, **''तू ये काम किस के अधिकार से करता है? और तुझे यह अधिकार किस ने दिया?''** विजयी प्रवेश (21:1–11), मन्दिर को शुद्ध करने (21:12, 13), अंधे और लंगड़े को चंगा करने (21:14) और बच्चों के स्तुति करने (21:15–17) जैसे कई अवसरों ने इन लोगों का ध्यान खींचा था। यहां पर यीशु एक रब्बी की तरह काम कर रहा था, चाहे वह यरूशलेम में किसी धार्मिक अधिकारी द्वारा यह काम करने के लिए ठहराया नहीं गया था। उसका अधिकार पिता की ओर से मिला था (देखें 7:28, 29; 9:6; 10:1; 28:18)।

आयत 24. यीशु ने इन अगुओं को बताया कि यदि वे उसके एक प्रश्न का उत्तर दे देते हैं तो वह उन्हें समझा देगा कि उसे **अधिकार** कहां से मिला। मसीह आम तौर पर किसी प्रश्न का उत्तर एक और प्रश्न के साथ ही होता था। डब्ल्यू. एफ़. अल्ब्राइट और सी. एस. मन ने लिखा है कि ''हमें लग सकता है कि प्रश्न और प्रश्न के बदले प्रश्न पूछने का ढंग टालने की चालें हो सकती हैं, परन्तु पांचवीं शताब्दी ई.पू. के आरम्भ तक यूनानी व्यवहार के साथ-साथ यूनानी भाषा बोलने वालों और बाद के रब्बियों के समयों में बहस का एक सामान्य रूप था।''[24] यदि ये अगुवे ईमानदार होते तो यीशु के प्रश्न का उनका उत्तर उनके ही पूछे गए प्रश्न में (तर्कसंगत के द्वारा) मिल जाना था।

आयतें 25, 26. यीशु ने प्रधान याजकों और पुरनियों से पूछा कि **यूहन्ना का बपतिस्मा स्वर्ग की ओर से था या मनुष्यों की ओर से** ''स्वर्ग'' ''परमेश्वर'' के लिए एक सामान्य यहूदी

विकल्प था यानी इस शब्द का इस्तेमाल ईश्वरीय नाम के दुरुपयोग से बचने के लिए इस प्रकार से किया जाता था (निर्गमन 20:7)। परमेश्वर की ओर से या मनुष्यों की ओर से केवल दो ही विकल्प थे और आपस में दोनों विशेष थे (देखें प्रेरितों 5:38, 39)।

इन अगुओं को समझ आ चुका था कि उन्होंने अपने आपको मुश्किल में डाल दिया है। यदि उनका उत्तर "**स्वर्ग की ओर से**" होता तो उन्होंने सही समझा कि यीशु का उत्तर होता, "**फिर तुम ने उस पर विश्वास क्यों नहीं किया?**" यूहन्ना को नबी मान लेने से उन्हें यीशु को भी मसीहा मानना पड़ता क्योंकि यूहन्ना ने यीशु की पहचान की पुष्टि की थी (यूहन्ना 1:29-34)। परन्तु उन्होंने यूहन्ना को नकार दिया (21:32)। यदि उनका उत्तर होता, "मनुष्यों की ओर से" तो उन्हें डर था कि **भीड़** दंगा आरम्भ कर देगी, क्योंकि **वे सब यूहन्ना को भविष्यवक्ता मानते** थे (14:5)।

आयत 27. प्रधान याजकों और पुरनियों की चिन्ता सच्चाई की खोज से बढ़कर अधिकार के अपने पदों की रक्षा करने की थी। इन लोगों ने **यीशु** को यह कहते हुए उत्तर दिया, "**हम नहीं जानते**।" अपना विचार बताने के बजाय उन्होंने तटस्थता का राजनैतिक रूप में सही मार्ग चुना। जिस कारण यीशु ने उत्तर दिया, "**तो मैं भी तुम्हें नहीं बताता, कि ये काम किस अधिकार से करता हूं**।" प्रभु के उत्तर से "उनका कपट सामने आ गया और साथ ही लोगों को यह बहुत स्पष्ट हो गया कि उसका अधिकार भी यूहन्ना की तरह ही था।"[25]

❖❖❖❖❖ **सबक** ❖❖❖❖❖

कमज़ोरों के लिए करुणा (21:14-17)

हर बारी में यीशु ने उनके लिए करुणा दिखाई जिनका समाज में कोई रुतबा या पहचान नहीं थी। उसने अंधे और लंगड़े को उन्हें भीख मांगने और संताप के जीवन से बचाते हुए चंगाई दी। उनकी शारीरिक चंगाई से उन्हें आत्मिक रूप में भी आशीष मिली, क्योंकि वे मन्दिर में परमेश्वर के निकट आ गए। हमें परेशान लोगों के लिए जो विभिन्न प्रकार की बीमारियों या घावों से पीड़ित हों, करुणा करनी चाहिए। इससे भी बढ़कर हमें उनकी आत्माओं की चिंता होनी चाहिए।

यीशु की बच्चों में भी गहरी दिलचस्पी थी। उसने उनके लिए समय निकाला और उन्हें आशीष दी। उसने उनके द्वारा की गई स्तुति को स्वीकार किया। हमें बच्चों को जन्म से ही यीशु के प्रेम के बारे में बताने के सचेत प्रयास करने आवश्यक हैं। हमें चाहिए कि उन्हें सिखाएं, प्रोत्साहित करें और उनकी रक्षा करें।

डेविड स्टिवर्ट

सूखे पेड़ और ठुकराए हुए पत्थर (21:18-46)

मत्ती 21:18-46 में यीशु ने अपने समय के अविश्वासी यहूदियों का विरोध किया जो परमेश्वर का विद्रोह करते थे।

1. *फल रहित अंजीर का पेड़* (21:18-22)। प्रभु अंजीर के पेड़ से निराश हुआ क्योंकि दूर से लगता था कि इसमें फल लगे हैं, परन्तु नज़दीक से देखने पर इसमें कोई फल न मिला।

उस समय से परमेश्वर के कई लोगों के लिए यह मेल खाता प्रतीक था। उनके पास व्यवस्था थी और उन्हें धार्मिकता के फल देने चाहिए थे, परन्तु उन्होंने नहीं दिए। यीशु ने यरूशलेम पर आने वाले विनाश का संकेत देने के लिए अंजीर के पेड़ को श्राप दे दिया। चेलों को चाहे यह समझ में नहीं आया कि यीशु ने ऐसा क्यों किया, परन्तु वे इस बात से स्तब्ध थे कि उसने ऐसा किया कैसे। प्रभु ने इस बात को विश्वास पर उन्हें सिखाने के लिए अवसर के रूप में इस्तेमाल किया।

2. *विश्वास रहित लोग* (21:23-32)। यहूदी अगुओं ने यीशु में विश्वास नहीं किया चाहे उसने उनके सामने कई अदभुत चिह्न दिखाए। इसलिए उन्होंने ये सब काम करने के उसके अधिकार के स्रोत पर ही सवाल उठा दिया। सच्चाई की खोज करने के बजाय वे यीशु को खत्म करने की कोशिश कर रहे थे। दो पुत्रों के दृष्टांत में उसने उनके आज्ञा न मानने को सामने लाया।

3. *असफल सिस्टम* (21:33-46)। गृहस्वामी और दाख की बारी के दृष्टांत में यीशु ने दिखाया कि यहूदी अगुओं ने आम तौर पर परमेश्वर की इच्छा को नकारा था। अपने इतिहास के द्वारा उन्होंने राज्य पर उसके अधिकार को छीनने की कोशिश की। उन्होंने उन भविष्यवक्ताओं को मार डाला था, जो उन्हें मन फिराव करने को कहने के लिए भेजे थे। अन्त में उन्होंने उसके पुत्र को भी मार देना था। उन्हें दण्ड मिलना था और परमेश्वर ने विश्वास के एक नये लोग अर्थात कलीसिया को बनाना था।

डेविड स्टिवर्ट

यूहन्ना का बपतिस्मा (21:23-27)

यूनानी भाषा के क्रिया शब्द *baptizō* (बैप्टिजो) में हमेशा डुबकी या पूरी तरह से डूब जाने का अर्थ होता है। किसी को चाहे किसी भी चीज़ में बपतिस्मा दिया जाए या डुबोया जाए यह बात लागू होती है। नये नियम में पांच अलग-अलग बपतिस्मों की बात है। एक तो दुखों का बपतिस्मा है (मरकुस 10:38, 39)। दो अन्य बपतिस्मों का नाम पवित्र आत्मा का बपतिस्मा और आग का बपतिस्मा (नरक की अनन्त आग में पापियों के फैंके जाने के सम्बन्ध में; 3:11, 12 पर टिप्पणियां देखें) का नाम मत्ती 3:11 में दिया गया है। अन्य दो बपतिस्मों में यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले का बपतिस्मा और ग्रेट कमीशन वाला बपतिस्मा (28:19, 20) है।

यूहन्ना चाहे "मन फिराव का बपतिस्मा" देता था यानी जो लोग उससे बपतिस्मे लेते थे उन्हें अपने पापों से मन फिराने के लिए कहा जाता था (3:8) परन्तु यह "पापों की क्षमा के लिए" भी था (मरकुस 1:4)। उन्हें मसीह के आने और उसके लहू बहाने को ध्यान में रखकर बपतिस्मा दिया जा रहा था। हमें ऐसा कोई रिकॉर्ड नहीं मिलता कि मसीह की मृत्यु के पहले यूहन्ना का बपतिस्मा पाने वाले किसी व्यक्ति को दोबारा बपतिस्मा दिया गया हो। इस बात का कि पिन्तेकुस्त के दिन बपतिस्मा लेने वाले तीन हज़ार लोग "उनमें मिलाए गए" (प्रेरितों 2:41; NIV) संकेत देता है कि कुछ लोग पहले से राज्य में थे। इफिसुस के वे बारह पुरुष जिन्हें पौलुस द्वारा बपतिस्मा दिया गया था उन्हें मसीह की मृत्यु *के बाद* और ग्रेट कमीशन का बपतिस्मा आरम्भ होने *के बाद* यूहन्ना का बपतिस्मा दिया गया (प्रेरितों 19:1-7)। यदि मसीह का लहू व्यवस्था के अधीन रहने वालों के पापों को ढांप सकता तो निश्चय ही यह मसीह के क्रूस पर दिए जाने से पहले यूहन्ना का बपतिस्मा पाए हुए लोगों को भी ढांप सकता था (इब्रानियों 9:15)।

टिप्पणियां

[1]जोसेफस *एन्टिक्विटीस* 15.11.1. हेरोदेस ने 37 ई.पू. में राज करना आरम्भ किया और मन्दिर पर काम ''उसके शासन के अठारवें वर्ष में'' (19 ई.पू.) आरम्भ हुआ। [2]आर. टी. फ्रांस, द *गॉस्पल अकॉर्डिंग टू मैथ्यू,* द टिंडेल न्यू टैस्टामैंट कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1985), 300. [3]*साम्ज़ ऑफ़ सॉलोमन* 17:21, 30. [4]पहली शताब्दी के दौरान याजकों के लालच के लिए देखें जोसेफस *एन्टिक्विटीस* 20.8.8; 20.9.2. [5]मिशनाह *शेकालिम* 1.1–3. [6]वही, 4.8, 9. [7]मिशनाह *बेराकोथ* 8.7; टालमुड *इदुशीन* 11ए। [8]लियोन मौरिस, द *गॉस्पल अकॉर्डिंग टू मैथ्यू,* पिल्लर कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1992), 526. [9]मिशनाह *केरियोथ* 1.7. [10]मिशनाह *बेराकोथ* 9.5.

[11]डोनल्ड ए. हैग्नर, *मैथ्यू 14–28,* वर्ड बिब्लिकल कमैंट्री, अंक 33बी (डलास: वर्ड बुक्स, 1995), 601. [12]जोसेफस *एन्टिक्विटीस* 15.11.5; *वार्स* 5.5.2; 6.2.4. [13]जौंडरवन इलस्ट्रेटड बाइबल बैकग्राउंड्स कमैंट्री, अंक 1, *मैथ्यू, मार्क, लूक* संपा. क्लिंटन ई. अरनोल्ड (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: जौंडरवन, 2002), 130 में माइकल जे. विलकिंस, ''मैथ्यू।'' [14]मिशनाह *हगिगाह* 1.1. [15]हैग्नर, 601. देखें *मेसियानिक रूल* 2. [16]मौरिस, 528–29. [17]क्रेग एस. कीनर, *ए कमैंट्री ऑन द गॉस्पल ऑफ़ मैथ्यू* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1999), 502. [18]2 मक्काबियों 7:27. [19]देखें मरकुस 11:21, जिस में यीशु के अंजीर के पेड़ को ''श्राप देने'' की बात है। [20]विलियम हैंड्रिक्सन, *न्यू टैस्टामैंट कमैंट्री: एक्सपोज़िशन ऑफ़ द गॉस्पल अकॉर्डिंग टू मैथ्यू* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1973), 773.

[21]*द इंटनैशनल स्टैंडर्ड बाइबल इन्साइक्लोपीडिया,* संशो., संस्क. संपा. ज्योफ्री डब्ल्यू. ब्रोमिले (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1982), 2:302 में आर. के. हेरिसन, ''फिग; फिग ट्री।'' [22]कीनर, 505. [23]कलीसिया की स्थापना के बाद पतरस और यूहन्ना से ऐसे ही प्रश्न पूछे गए थे (प्रेरितों 4:5–7)। [24]डब्ल्यू. एफ. अल्ब्राइट एंड सी. एस. मन, *मैथ्यू,* द एंकर बाइबल (गार्डन सिटी, न्यू यार्क: डबलडे एंड कं., 1971), 260. [25]जे. डल्ब्यू. मैक्वर्वे, द *न्यू टैस्टामैंट कमैंट्री,* अंक 1, *मैथ्यू एंड मार्क* (पृष्ठ नहीं, 1875; रिप्रिंट, डिलाइट, आरकैंसा: गॉस्पल लाइट पब्लिशिंग कं., तिथि नहीं), 183.